ISSN: 0973-0583

बालक के विकास में शिक्षा का महत्त्व

डॉ० विक्रम सिंह

सहायक प्राध्यापक, शिक्षा विभाग, आर. के. कॉलेज, मधुबनी

शोध सार

परिवार, बालक के विकास की प्रथम पाठशाला है। यह बालक में निहित योग्यताओं एवं क्षमताओं का विकास करता है। परिवार का प्रत्येक सदस्य, बालक के विकास में अपना योगदान देता है। परिवार सबसे पुराना और मौलिक मानव समूह है। पारिवारिक ढांचे का विशिष्ट रूप एक समाज के रूप में समाज में विभिन्न हो सकता है और होता है पर सब जगह परिवार के मुख्य कार्य हैं- बच्चे का पालन करना, उसे समाज की संस्कृति से परिचित कराना, बच्चे को शिक्षित और उसका सामाजीकरण करना है। बच्चों को शिक्षा के महत्व से परिचित करवाना बहुत महत्वपूर्ण है। शिक्षा की कमी से इस बात की संभावना रहती है कि वह बच्चे समाज के लिए खतरा बन सकते हैं।

शब्द कुंजी: सामाजीकरण, नैतिकता, विकासात्मक, अवधारणा, शिक्षा प्रणाली,संस्कृति

माता पिता बालक की प्रथम पाठशाला होते हैं। बालक घर में वो सभी गुण प्राप्त कर सकता है जिसकी पाठशाला में आवश्यकता होती है। बालकों को घर पर ही नैतिकता एवं सामाजिकता का प्रशिक्षण मिलता है। बालक ही सामाजिक तथा अनुकूलन के गुण विकसित करता है। सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों का विकास करने में परिवार का योगदान मुख्य है इससे कोई इंकार नहीं कर सकता है।

वर्तमान में बच्चों में जीवन जीने के तरीके में बहुत ज्यादा बदलाव आ गया है। आज का नागरिक अपना जीवन अपने अंदाज में ही व्यतीत करना चाहता है। इसमें वह किसी का भी हस्तक्षेप करना उसे बिल्कुल पसंद नहीं करता है। इस जीवन जीने की कला में वह अपनी जिम्मेदारियों से भागने का भी प्रयास कर रहा है। इसका प्रतिकूल प्रभाव परिवार और समाज पर पड़ रहा है। विशेषकर अभिभावकों और शिक्षकों का मार्गदर्शन बच्चों के जीवन जीने की शैली को बहुत हद तक प्रभावित करता है। हमें उनकी भावनाओं को ठेस नहीं पहुँचाते हुए परिवार, समाज और राष्ट्र के प्रति उनके दायित्वों के प्रति भी जागरूक करना होगा। ऐसा नहीं करते हैं तो युवा पीढ़ी अपने जीवन और उनके दायित्वों के बारे में कभी भी जिम्मेदार नहीं हो पाएंगे।

बच्चों और माता पिता के ऐसे सभी लक्ष्य शिक्षा द्वारा ही प्राप्त हो सकते है। सभी माता पिता अपने बच्चों को सफलता की ओर जाते हुए देखना चाहते हैं, जो केवल अच्छी और उचित शिक्षा के माध्यम से ही संभव है। जीवन में सफलता प्राप्त करने और कुछ अलग करने के लिए शिक्षा सभी के लिए एक बहुत महत्वपूर्ण साधन है।

सभी बच्चों का यह अधिकार है कि उन्हें सर्वांगीण विकास एवं वृद्धि के वे सभी अवसर मिलें जिनसे उनमें निहित क्षमताओं का भरपूर विकास हो सके। जीवन के आरंभिक वर्ष वृद्धि, विकास और सीखने की दृष्टि से बेहद महत्वपूर्ण होते हैं। यह बात उन बच्चों पर भी लागू होती है, जिनकी शारीरिक अक्षमताओं के कारण उनकी कुछ विशिष्ट आवश्यकताएँ होती हैं। तंत्रिका विज्ञान के क्षेत्र में हुए शोध यह सिद्ध करते हैं कि उम्र के इस चरण में मस्तिष्क का विकास बहुत तेजी से होता है। बच्चों के जीवन के शुरूयाती वर्षों में आस-पास का परिवेश उनके तंत्रिका तंत्र के विकास पर महत्वपूर्ण रूप से प्रभाव डालता है। साथ ही सही समय पर सर्वोत्तम उद्दीपन प्रदान करना मस्तिष्क की कोशिकाओं के लिए सबसे महत्वपूर्ण होता है। यह निर्धारित करता है कि व्यक्ति जीवनपर्यन्त किस प्रकार से व्यवहार करेंगे। किस प्रकार की सोच रखेंगे और किस प्रकार से सीखेंगे। मस्तिष्क के भिन्न-भिन्न बहु-आयामी घटक समन्वित तरीके से कार्य करते हैं और इससे विकास के सभी क्षेत्रों में कौशल एवं क्षमताएँ अर्जित करने को बढ़ावा मिलता है। तीन से छह बर्ष की आयु के दौरान बच्चों की जिन सर्वांगीण क्षमताओं का विकास होता

है, वे विद्यालय में उनके समायोजन एवं उनके खुशहाल जीवन के लिए बहुत ही आवश्यक होती हैं। रचनात्मक खेलों, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए निर्मित खेलों में किए गए परिवर्तनों तथा विकास उपयुक्त गतिविधियों के द्वारा बच्चों की स्मरण शक्ति का विकास होता है। इन गतिविधियों द्वारा वे ध्यान केंद्रित कर पाते हैं और अपने पर नियंत्रण रखना सीखते हैं। बच्चों में कार्य निष्पादन एवं आत्मनियमन की योग्यताएँ एक ऐसी नींव का काम करती हैं जिससे उनमें भरपूर आत्मविश्वास पैदा होता है और आगे के वर्षों में उनका सीखना भी बहुत आसान व कुशलता के साथ होता है। वे बड़ी सहजता से अपने साथियों के बीच और विभिन्न अधिगम शैलियों के साथ अनुकूलन करना सीख जाते हैं। यह भी बहुत महत्वपूर्ण है कि बच्चों को भावनात्मक रूप से संबल प्रदान करने वाला ऐसा वातावरण मिले जिससे वे शिक्षक के साथ स्वस्थ एवं सुरक्षित संबंध विकसित कर सकें। बच्चों को इस प्रकार का मुक्त परिवेश देना चाहिए कि वे खोजबीन कर सकें, सीख सकें, अभिव्यक्त कर सकें और स्वयं के प्रति सकारात्मक अवधारणा बना सकें। शोध यह प्रमाणित करते हैं कि पूर्व-प्राथमिक कार्यक्रमों में बच्चों की प्रतिभागिता लाभदायक हैं क्योंकि इससे बच्चों के पोषण, स्वास्थ्य और शिक्षा तीनों पर ही सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यह उनके वर्तमान और भविष्य दोनों के लिए बहुत मायने रखती है यदि हम आर्थिक नजरिए से भी देखें तो पूर्व-प्राथमिक विद्यालयी कार्यक्रमों में निवेश एक प्रकार से उच्च स्तरीय मानवीय संपदा की तैयारी है जिसके लिए सार्वजनिक सहभागिता की विशेष आवश्यकता है।

पूर्व-प्राथमिक विद्यालयी कार्यक्रमों से न केवल बच्चों और परिवारों को फायदा होता है, बल्कि इससे सामाजिक असमानता भी कम होती है और इस प्रकार समुदाय और अंततः पूरे समाज को लाभ पहुँचता है। इसलिए, प्रेरक अनुभव देने के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान करना बच्चों के सीखने की योग्यताओं पर सकारात्मक प्रभाव डालता है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए, पूर्व-प्राथमिक पाठ्चर्या का लक्ष्य ऐसा दृष्टिकोण विकसित करना है जिससे विकास के सभी क्षेत्रों में प्रत्येक बच्चे की स्वाभाविक क्षमताओं का विकास सुगमता से हो सके। पाठ्चर्या, विकास की उन अवस्थाओं पर ध्यान देने पर बल देती है जब बच्चे पूछताछ करते हैं, खोजबीन करते हैं और अपने बारे में और अधिक जानने का प्रयास करते हैं। साथ ही सीखने से जुड़ी उन प्रवृत्तियों और दक्षताओं की भी पहचान कर लेते हैं जो आगे आने वाले जीवन के लिए जरूरी हैं। इस पाठ्चर्या का लक्ष्य यह भी है कि सीखने के प्रतिफलों के साथ विकास के सभी घटकों को इस प्रकार समेकित रूप में देखा जा सके जो इस आयु के बच्चों की स्वाभाविक अधिगम प्रक्रिया के ताने-बाने के साथ मेल खाते हों।

माँ के गर्भ में एक निषेचित अण्डाणु के बारे में सोचिए। कितना आश्चर्यजनक लगता है कि एक कोशिका नौ महीनों में एक पूर्व शिशु के रूप में विकसित हो जाती है। इस शिशु के श्वसन तंत्र, पाचन तंत्र, स्नायु तंत्र, कंकाल तंत्र जैसे कई जटिल तंत्र होते हैं जो उसके जीवन के लिए आवश्यक हैं। नवजात बच्ची स्पर्श का अनुभव करती है, वह देखती है, सूंघती है और रोती भी है। ये क्षमताएँ उसे जन्म के बाद बहुत भिन्न परिवेश में समायोजन करने में मदद करती हैं, परन्तु इन योग्यताओं के बावजूद बच्ची पालन-पोषण के लिए पालनकर्त्ता पर निर्भर करती है। पूर्व रूप से पालनकर्त्ता पर आश्रित बच्ची धीरे-धीरे बैठना, फिर खड़े होना और फिर चलना सीख जाती है। वह स्वयं भोजन करना, कपड़ा पहनना सीखती है तथा अपनी आवश्यकताओं को शब्दों में व्यक्त करना भी सीख जाती है। धीरे-धीरे बच्ची अधिक स्वावलंबी होती जाती है और उसकी रूचियों में विस्तार होता है। आगे चलकर वह मित्र बनाएगी और उनके साथ खेल-क्रियाओं में भाग लेगी। वह घर के कार्यो में भी सहयोग देगी और संभव है कि वह आय उत्पादक क्रियाओं में भी भाग लें। यह भी हो सकता है कि वह एक व्यवसाय चुने और उसके लिए अध्ययन करें। यह बच्ची वयस्क होकर आर्थिक रूप से स्वतंत्र भी बन सकती है। उसका विवाह होगा और बच्चे भी होंगे। एक गर्भस्थ कोशिका से एक सुयोग्य वयस्क व योग्य नागरिक कैसे बन जाता है? क्या आपने कभी यह सोचा है कि आप जिस प्रकार के व्यक्ति हैं वैसे क्यों हैं? आपके भाई और बहनें आपसे भिन्न क्यों हैं? केवल देखने में ही नहीं परन्तु व्यवहार में भी। इसका क्या कारण है कि एक बालिका अपने पड़ोस में लोकप्रिय है, उसके कई मित्र हैं जबकि दूसरी बालिका संकोची है और अपने अध्यापक के समीप रहती है। क्या सभी बच्चों में विभिन्न कौशलों व योग्यताओं का विकास एक ही समय होता है? क्या सभी तीन वर्षीय बच्चे एक समान होते हैं? एक चार

वर्षीय बच्चे से हम क्या अपेक्षा कर सकते हैं? क्या-विकास का कोई निश्चित स्वरूप है जिसके आधार पर हम यह कह सकते हैं कि एक तीन वर्षीय बच्ची का व्यवहार पाँच वर्षीय बच्ची से भिन्न होगा? ऐसे सभी प्रश्न बाल विकास विषय के अंतर्गत आते हैं। क्या आपने कभी यह सोचा कि आप जिस प्रकार के व्यक्ति हैं वैसे क्यों हैं? आपके भाई और बहनें आपसे भिन्न क्यों हैं? बाल विकास विषय का संबंध बच्चों के व्यवहार में समय के साथ होने वाले परिवर्तनों से है। यह विषय इससे भी संबंधित है कि ये परिवर्तन क्यों और कैसे होते हैं? अत: इस विषय का उद्देश्य शारीरिक, सामाजिक, भावनात्मक, भाषायी व ज्ञानात्मक क्षेत्रों में विकास को समझना और उसकी व्याख्या करना है।

बालक के विकास में परिवार की शिक्षा का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है-आज परिवार से मिलने वाली शिक्षा में अनेक कमियाँ आ गयी हैं। अत: किसी भी घर को (विशेषत: भारतीय घर कों) शिक्षा का प्रभावशाली साधन बनाने के लिए तथा कमियों को दूर करने के लिए निम्नलिखित उपायों को अपनाया जा सकता है-

1. भौतिक वातावरण: सामान्य भारतीय घर के भौतिक वातावरण सम्बन्धी प्रभाव को स्वस्थ नहीं कहा जा सकता है। एक साधारण मनुष्य के घर की स्थिति, उसका पड़ोस, उसके कमरे, उसका फर्नीचर आदि बहुत ही बुरा दृश्य प्रस्तुत करते हैं। यह बालक के स्वास्थ्य और विकास के लिए तनिक भी उपयुक्त नहीं है। अत: भारतीय घरों के भौतिक वातावरण में परिवर्तन लाना अतिआवश्यक है। जब वातावरण से अवांछनीय बातों को निकाल दिया जायेगा, तभी बालकों को आगे नैतिक और मानसिक विकास के लिए उचित वातावरण मिलेगा।

2. मानसिक वातावरण: यह कहना अनुचित न होगा कि भारत में ऐसे घर बहुत ही कम है, जहाँ बालकों को अपनी बुद्धि के विकास के लिए उपयुक्त मानसिक वातावरण मिलता है। इसके दो प्रमुख कारण है:-

1. अभिभावकों की निरक्षरता 2. निर्धानता।

अत: वे अपने बच्चों के लिए उपयुक्त पुस्तकों, सचित्र और साप्ताहिक पत्रिकाओं, समाचार पत्रों आदि की बात सोचते ही नहीं। इस स्थिति में सरकार का कर्तव्य हो जाता है कि वह स्थान-स्थान पर पुस्तकालय और वाचनालय खोले। ये पुस्तकालय और वाचनालय प्रत्येक घर में पुस्तकों और पत्रिकाओं क्रम से भेजने का प्रबन्ध करें।

ऐसा किये बिना बालक अपने घर में उपयुक्त मानसिक वातावरण के प्रभावों से वंचित रहेंगे।

3. सामाजिक वातावरण: आमतौर पर भारत में ग्रामीण और शहरी दोनों ही क्षेत्रों में सामाजिक वातावरण सम्बन्धी प्रभाव बहुत ही कमजोर है। ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों के बालकों को एक निश्चित हानि का सामना करना पड़ता है। ग्रामीण बालक पुराने ढंग का व्यवहार करने लगता है और शहरी बालक पर उसके साथियों का बुरा प्रभाव पड़ता है। इन दोषों को दूर करने के लिए ऐसे वातावरण का निर्माण आवश्यक है जो स्वस्थ हो और जिस पर पड़ोस का अच्छा प्रभाव हो तभी बालकों को सामाजिक वातावरण से अधिकतम लाभ हो सकता है। साथ ही जाति प्रथा एवं साम्प्रदायिकता के दोषों को दूर करने का प्रयास किया जाये।

4. पैतृक विचार: बालक अपने माता-पिता से कुछ क्षमताएँ और योग्यताएँ प्राप्त करता है। अधिकांश भारतीय माता-पिता निरक्षर होने के कारण शिक्षित माता-पिता की क्षमताओं और योग्यताओं का दावा नहीं कर करते हैं। अत: घर को शिक्षा का प्रभावशाली साधन बनाने के लिए आवश्यक है कि निरक्षरता को दूर किया जाये। माता-पिता को एक निश्चित स्तर तक शिक्षा दी जाये। साथ ही उन्हें पारिवारिक सदस्यता में प्रशिक्षण दिया जाये।

गृह-शिक्षक के रूप में अभिभावक:

गृह-शिक्षक के रूप में अभिभावक कुछ युवा माता-पिता प्रारंभिक बाल्यावस्था की गतिविधियों की महत्ता को नहीं मानते, तो कुछ माता-पिता उन्हें यांत्रिक रूप से प्रयोग में लाते हैं, तो कुछ को इनका ज्ञान ही नहीं होता और वे बच्चों को घर पर अनावश्यक औपचारिक शिक्षा के बोझ तले दबा देते हैं। वर्षों से सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों के कारण भारतीय माताएँ अपने पुरातन संस्कारों को छोड़ती जा रही हैं। इसकी वजह संयुक्त परिवारों का विघटन तथा नौकरी की तलाश में मूल स्थान छोड़ना आदि है। परिणामस्वरूप बच्चों के पालन-पोषण के परंपरागत तरीके तेजी से बदलते जा रहे हैं। अब पुराने खेल, गीत, कहानियाँ, घरेलू खिलौने जो बच्चों के माता-पिता तथा घर के बड़े-बूढ़े, दादा-दादी आदि उपयोग में लाते थे, उनका

उपयोग लगभग समाप्त होता जा रहा है।

संयुक्त परिवार से एक और लाभ भी था- परिवार में सगे संबंधियों के बच्चे भी होते थे। सब मिलकर खाते-पीते, खेलते और एक-दूसरे से सीखते भी थे। आज के छोटे (लघु) परिवार में इन सबकी कोई संभावना नहीं। माता-पिता अगर बच्चे को उसके हाल पर छोड़ दें तो बच्चा अपने वातावरण में जो कुछ देखेगा, सही या गलत, उसे अपना लेगा, क्योंकि उसमें अभी इन दोनों में अंतर करने की क्षमता का अभाव होता है। परंतु माता-पिता जब घर में एक प्रेमपूर्वक सीखने का वातावरण बनाते हैं, तो बच्चों के भीतर सुरक्षा और जिज्ञासा की भावना पैदा होती है। अत: शिक्षिका तथा माता-पिता को मिलकर यह प्रयास करना चाहिए कि बच्चा सीख सके और आगे बढ़ सके। माता-पिता की सहभागिता से अभिप्राय है कि पूर्व प्राथमिक शिक्षा के नियोजन और क्रियान्वयन में वे आगे बढ़कर शिक्षिका की सहायता करें और बच्चे के अभिभावक की भूमिका को अधिक सफलतापूर्वक और प्रभावी ढंग से निभाएं। आजकल नर्सरी में दाखिले के लिए भी छोटे बच्चों की प्रवेश परीक्षा ली जाती है। नर्सरी में प्रवेश के बाद 'थ्री आर्स' सीखने पर विशेष बल दिया जाता है। इस तरह के तरीके प्रयोग करने से बच्चे तो बोझ तले दबे ही रहते हैं, माता-पिता भी दबाव में रहते हैं। बच्चे के जीवन को उपयुक्त सांचे में ढालने के लिए शिक्षक एवं माता-पिता की अहम् भूमिका है। माता-पिता को चाहिए कि वे बच्चे पर अनावश्यक दबाव न डालें, बल्कि उनके साथ खेलें। खेल-खेल में ही बच्चे बहुत कुछ सीखते जाते हैं। साथ ही माता-पिता को चाहिए कि वे शिशु उद्दीपन की पर्याप्त जानकारी प्राप्त करके बच्चों का उद्दीपन सार्थक एवं प्रभावशाली बनाएँ।

बाल विकास के चरण

माइलस्टोंस विशिष्ट शारीरिक और मानसिक क्षमताओं (जैसे चलने और समझने की भाषा) में होने वाले परिवर्तन हैं जो एक विकासात्मक अवधि के अंत और दूसरी विकासात्मक अवधि के आरम्भ को चिह्नित करते हैं। चरण सिद्धांतों के लिए माइलस्टोंस से चरण परिवर्तन का संकेत मिलता है। कई विकास कार्यों की पूर्णता के अध्ययनों ने विकासात्मक माइलस्टोंस के साथ जुड़े विशिष्ट कालानुक्रमिक आयु को स्थापित किया है। हालाँकि, सामान्य सीमा के भीतर विकासात्मक चक्रों वाले बच्चों के बीच भी माइलस्टोंस की प्राप्ति में काफी अंतर है। कुछ माइलस्टोंस दूसरे से अधिक परिवर्तनीय होते हैं। उदाहरण के लिए, ग्रहणशील भाषण संकेतकों से सामान्य रूप से सुनने वाले बच्चों में काफी भिन्नता का पता चलता है लेकिन अर्थपूर्ण भाषण माइलस्टोंस काफी परिवर्तनीय हो सकते हैं।

बच्चे के विकास से संबंधित एक आम चिंता विकासात्मक देरी है जिसमें महत्वपूर्ण विकासात्मक माइलस्टोंस के लिए एक आयु-विशिष्ट क्षमता में देरी शामिल है। विकासात्मक देरी की रोकथाम और उसमें आरंभिक हस्तक्षेप बच्चे के विकास के अध्ययन का महत्वपूर्ण विषय है। विकासात्मक देरी की पहचान किसी माइलस्टोन की विशिष्ट परिवर्तनीयता के साथ तुलना करके, न कि उपलब्धि में औसत आयु के संबंध में, करनी चाहिए। माइलस्टोन का एक उदाहरण आँख और हाथ का समन्वय हो सकता है जिसमें एक समन्वित तरीके से वस्तुओं में फेरबदल करने से संबंधित बच्चे की बढ़ती क्षमता शामिल है।

बच्चे का विकास का मुद्दा कोई एकाकी विषय नहीं है बाल्कि यह कुछ हद तक व्यक्ति के विभिन्न पहलुओं के लिए अलग ढंग से प्रगति करता है। यहाँ कई शारीरिक और मानसिक विशेषताओं के विकास का वर्णन दिया गया है। शारीरिक विकास जन्म के बाद 15 से 20 वर्ष की आयु तक कद और वजन के क्षेत्र में शारीरिक विकास होता है। सही समय पर जन्म लेने के समय के औसत वजन 3.5 किलो और औसत लम्बाई 50 सेमी से बढ़ते-बढ़ते व्यक्ति अपने पूर्वा वयस्क आकार तक पहुँचता है। जैसे-जैसे कद और वजन बढ़ता जाता है वैसे-वैसे व्यक्ति के शारीरिक अनुपात भी बदलते हैं, नवजात शिशु का सिर अपेक्षाकृत बड़ा और धड़ तथा बाकी अंग छोटे होते हैं जो कि वयस्क होने पर अपेक्षाकृत रूप से छोटे सिर और लंबे धड़ तथा अंगों में परिणत हो जाता है। विकास की गति और पद्धति शारीरिक विकास की गति जन्म के बाद के महीनों में तेज होती है और उसके बाद धीमी पड़ जाती है इसलिए जन्म के समय का वजन पहले चार महीनों में दोगुना और 12 महीने की उम्र में तिगुना हो जाता है लेकिन 24 महीने तक चौगुना नहीं होता है। यौवन (लगभग 9 से 15 साल की उम्र के बीच) के थोड़ा पहले तक विकास धीमी गति से होता रहता है, उसके बाद विकास की गति काफी तीव्र हो जाती है। शरीर के सभी हिस्सों में होने वाली वृद्धि की दर और समय में एकरूपता नहीं होती

है। जन्म के समय सिर का आकार पहले से ही लगभग एक वयस्क के सिर के आकार की तरह होता है लेकिन शरीर के निचले हिस्से वयस्क के निचले हिस्सों की तुलना में काफी छोटे होते हैं। उसके बाद विकास के क्रम में सिर धीरे-धीरे छोटा होता जाता है और धड़ और बाकी अंगों में तेजी से विकास होने लगता है। विकासात्मक परिवर्तन की क्रिया- विधि (वृद्धि) दर के निर्धारण में और खास तौर पर आरंभिक मानव विकास की अनुपातिक विशेषता में होने वाले परिवर्तनों के निर्धारण में अनुवांशिक कारकों की एक मुख्य भूमिका होती है। हालाँकि आनुवंशिक कारकों की वजह से केवल तभी अधिकतम वृद्धि हो सकती है जब पर्यावरणीय परिस्थितियाँ अनुकूल हों। खराब पोषण और अक्सर चोट और बीमारी की वजह से व्यक्ति का वयस्क कद धट सकता है लेकिन बेहतरीन माहौल की वजह से कद में बहुत ज्यादा वृद्धि नहीं हो सकती है जितना कि अनुवंशिकता से निर्धारित होता हो। जनसंख्या अंतर वृद्धि के क्षेत्र में जनसंख्या अंतर काफी हद तक वयस्क के कद से संबंधित होते हैं। वयस्क अवस्था में काफी लंबे रहने वाले जातिगत समूहों के बच्चे छोटे वयस्क कद वाले समूहों की तुलना में जन्म के समय और बचपन के दौरान भी लंबे होते हैं। पुरुष भी कुछ हद तक लंबे होते हैं हालाँकि वयस्क अवस्था में मजबूत यौन द्विरूपता वाले जातिगत समूहों में यह अधिक स्पष्ट होता है। विशेषतया कुपोषण के शिकार लोग भी जीवन भर छोटे या नाटे रहते हैं। हालाँकि वृद्धि दर और पद्धति में जनसंख्या अंतर अधिक नहीं होता है, सिवाय इसके कि खराब पर्यावरणीय परिस्थितियाँ यौवन और संबंधित वृद्धि दर में देरी का कारण बन सकती हैं। स्पष्ट रूप से लड़कों और लड़कियों के यौवन की अलग-अलग आयु का मतलब है कि 11 या 12 साल के लड़के और लड़कियाँ परिपक्वता के मामले में काफी अलग-अलग स्तर पर होते हैं और शारीरिक आकार के मामले में सामान्य यौन अंतर के विपरीत स्तर पर हो सकते हैं। बचपन में कद और वजन के मामले में काफी व्यक्तिगत अंतर होता है। इनमें से कुछ अंतरों की वजह पारिवारिक आनुवंशिक कारक और अन्य अंतरों की वजह पर्यावरवीय कारक हैं लेकिन विकास के क्रम में कहीं-कहीं प्रजनन परिपक्वता में व्यक्तिगत अंतरों का उन पर बहुत ज्यादा प्रभाव पड़ता है। उचित विकास पर नजर रखने में आसानी होती है।

बच्चों के समग्र व्यक्तित्व के आधार का निर्माण करने में प्ले स्कूलों ने काफी योगदान दिया है। ये स्कूल बच्चों को वांछित विद्यालय में प्रवेश पाने के लिए तैयार करने में मदद करते हैं। प्ले स्कूल छोटे बच्चों में सामाजिक और शैक्षिक कौशल का विकास करते हैं। यह स्कूल बच्चों को अधिक अनुशासित और समयनिष्ठ बनाते हैं। 2 से 3 साल की उम्र के बीच के बच्चों को प्ले स्कूल में भेजा जाता है। प्ले स्कूल बच्चों को औपचारिक स्कूलों में जाने के विचार से परिचित कराने में मदद करते हैं। यह स्कूल बच्चों को दुनिया का सामना करने के लिए तैयार करते हैं।

भारतीय बच्चों के शिक्षण में उपयोग की जाने वाली पद्धतियाँ नवीन होनी चाहिए। कक्षा में बच्चों का ध्यान आकर्षित करने जैसी सबसे बड़ी चुनौती का अक्सर शिक्षक को सामना करना पड़ता है। आज की शिक्षा प्रणाली का मुख्य उद्देश्य, बच्चों के दिमाग पर शिक्षा का लंबे समय तक प्रभाव डालना है। बच्चों को घर जाने के बाद कक्षा में क्या पढ़ाया गया था यह याद रखने में सक्षम होना चाहिए।

हर बच्चे का स्वभाव भिन्न होता है और वह अलग-अलग शिक्षण तकनीक का पालन करता है। एक बार जब आप उन्हें उनकी पसंदीदा सीखने की शैली का अभ्यास कराते हैं, तो वह आपको आश्चर्यचकित करने में कभी असफल नहीं होते हैं। बच्चों को पढ़ाने और कक्षाओं को अधिक रोचक बनाने के लिए शिक्षकों द्वारा प्रयोग की जाने वाली कुछ नवीन पद्धतियाँ इस प्रकार हैं। दृश्य (विजुअल) शिक्षण : बच्चे देखकर बहुत कुछ सीखते हैं। इसलिए अपनी शिक्षण पद्धतियों में चित्र, चार्ट, रेखा-चित्र और रंगों को शामिल करके बच्चे की रूचि को जागृत किया जा सकता है।

सुनना और सीखना : एक पाठ को कहानी के रूप में परिवर्तित करके बताना, बच्चों की शिक्षा के प्रति रूचि को बढ़ाएगा। कक्षा में बच्चों के साथ गायन का उपयोग करके उनके मनोभाव में वृद्धि की जा सकती है। **पहेलियाँ और खेल :** पहेलियों और खेलों की मदद से बच्चों को अभ्यास करवाएँ और उनका कक्षा में अधिक मात्र में उपयोग करें। इसके परिणामस्वरूप वे सक्रिय रूप से ऐसी गतिविधियों में भाग लेंगे।

कक्षा के बाहर कक्षाएँ लगाएँ: जब हम बच्चों को उनकी कक्षा से बाहर ले जाते हैं, तो वे बहुत उत्सुकतापूर्वक चीजों को सीखते और याद करते हैं। इसलिए शिक्षा की प्रासंगिकता के लिए क्षेत्रीय भ्रमण का आयोजन करें।

रोल प्ले भूमिका निभाना: यह किसी भी आयु वर्ग के बच्चों को पढ़ाने का सबसे उपयुक्त तरीका है। इस विधि से, वे कक्षा में पढ़ाए गए पाठ को तुरंत समझ सकते हैं।

स्मार्ट लर्निंग : एक बड़े छात्र को शिक्षित करने की तुलना में एक छोटे बच्चे को शिक्षित करना एक बहुत कठिन कार्य होता है। यह बच्चों में चीजों को समझने और उनकी व्याख्या करने तथा उन्हें सही दिशा देने के लिए महत्वपूर्ण है। यदि बच्चे शिक्षा की उचित पद्धतियों का अनुसरण करने में कामयाब नहीं होते हैं, तो वे बहुत जल्द शिक्षा के प्रति अपनी रूचि को खो देते हैं। स्मार्ट लर्निंग मनोरंजन तथा शिक्षा का मिश्रण है। यह पद्धति न केवल कक्षाओं को सुव्यवस्थित करती है, बल्कि यह अभ्यास कराने में बच्चों की रूचि का भी विकास करती है। इसमें ऑडियो और वीडियो उपकरण का संयोजन शामिल है, जो बच्चों में अभ्यास की जिज्ञासा को बढ़ाने के लिए प्रभावी ढंग से उपयोग किए जाते हैं। खेल, खिलौने, पॉडकास्ट, फिल्म और टेलीविजन आदि जैसे उपकरणों का उपयोग शिक्षण सत्र में काफी काम करता है।

स्मार्ट लर्निंग आज के कई स्कूलों द्वारा अपनाई जाने वाली एक प्रचलित पद्धति बन गई है। इस अभ्यास के उद्भव के बाद ब्लैकबोर्ड की अवधारणा अपना अस्तित्व खो रही है और जब बच्चों की बात आती है, तो उनके लिए अवकाश शिक्षा की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण होता है। जब बच्चे इसे पसंद करने लगते हैं, तो उनके लिए यह स्मार्ट लर्निंग की पद्धति काफी मजेदार हो जाती है।

शिक्षा के क्षेत्र में इतना विकास होने के बाद भी, भारत में अभी भी कुछ बच्चे ऐसे हैं, जो प्राथमिक शिक्षा से भी वंचित हैं। साक्षरता की कमी, बच्चों और साथ ही साथ देश के विकास के लिए भी खतरा बनी हुई है।

बाल निरक्षरता के पीछे के प्रमुख कारणों में वित्तीय संकट भी शामिल है, क्योंकि देश की ज्यादातर जनसंख्या गरीबी स्तर से नीचे जीवन यापन कर रही है, इसलिए वे अपने बच्चों को अच्छे स्कूलों में भेजने तथा वहाँ आने वाले खर्च को वहन नहीं कर पाते हैं। गाँवों और पिछड़े क्षेत्रों में, सरकार द्वारा चलाए जाने वाले विद्यालयों में व्यापक निरक्षरता के परिणाम कम दिखाई पड़ते हैं। जब माता-पिता के पास घर का खर्च चलाने के लिए कोई विकल्प नहीं बचता है, तो वह परिवार की आजीविका के लिए बच्चों को काम करने के लिए भेज देते हैं।

भारत सरकार ने भारतीय शिक्षा प्रणाली में सुधार के लिए कई योजनाओं की शुरूआत की है। सरकार द्वारा गरीब परिवार के बच्चों को स्कूलों में जाने के लिए सर्व शिक्षा अभियान और मिड-डे मील जैसी योजनाएँ चलाई जा रही हैं। सरकार भारत की साक्षरता दर बढ़ाने के लिए पिछड़े क्षेत्रों में भी स्कूलों की स्थापना कर रही है।

निष्कर्ष:

प्रत्येक बच्चे को स्कूल जाना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक के पास शिक्षा का समान अधिकार है। किसी भी देश का विकास और समृद्धि वहाँ के नागरिक को बचपन से प्राप्त शिक्षा की गुवावत्ता पर निर्भर करती है। प्रत्येक बच्चे अपने आप में खास अर्थात् हर बच्चे में कोई न कोई खूबी मौजूद होती है। इसलिए हमें बच्चों की कार्यक्षमता की पहचान करनी चाहिए और उन्हें सही दिशा में मार्गदर्शन करवाना चाहिए। आखिरकार, आज के बच्चे कल के भविष्य होगें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:

1. ब्रोनफेनब्रेनर, यू (1979) -दी इकोलॉजी ऑफ ह्यूमन डेवलपमेंट : लक्सपेरिमेंट्स बाय नेचर लंड डिजाइन, केम्ब्रिज, एम.ए. हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस. (आईएसबीएन 0-674-22457-4)।
2. बेर्क, लौरा ई. (2009)-चाईल्ड डेवलपमेंट, 8जी एड. संयुक्त राज्य अमेरिका : पियर्सन एजुकेशन, इंक. ।
3. मसूर एफई. (1995) -इन्फेन्ट्स' अर्ली वर्बल इमिटेशन लैण्ड देयर लेटर लेक्सिकल डेवलपमेंट, मेरिल-पाल्घर क्वाटर्ली, 41, 286-306 ।
4. विकासपीडिया से संग्रहित, ब्लॉग से संग्रहित, विकिपीडिया से संग्रहित ।

❖❖❖